शोध मंथन, Impact Factor 5.463 (SJIF), UGC No. 40908 ISSN: (P): 0976-5255, (e) : 2454-339X,
Vol. 9, Issue 4, pp (159-162), Month: Dec. 2018

वेदों में पर्यावरण और वनस्पति विज्ञान : एक समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ0 ऋचा मुक्ता
असि0 प्रोफे0, संस्कृत विभाग
ए.पी.सेन. मेमो. गर्ल्स डिग्री कालेज, लखनऊ
Email: richamukta@gmail.com

सरांश

भारतीय संस्कृति के इतिहास में वेदों का स्थान नितान्त गौरवपूर्ण है। 'वेदात् सर्व प्रसिद्धयति' अर्थात् वेद से ही सब विकसित हुआ है या 'वेदे सर्वं प्रतिष्ठितम्' अर्थात वेद में ही सम्पूर्ण ज्ञान प्रतिष्ठित है। मानव जीवन का कोई भी पहलू ऐसा नहीं है जिसकी चर्चा वेद में न की गई हो और पर्यावरण भी इसका अपवाद नहीं है। वायु, जल, पेड़–पौधे, भूमि, आकाश, सूर्य आदि ये सब पर्यावरण के घटक है। वेद में इन सब तत्वों का देव नाम से कथन किया गया है।

पर्यावरण शोधन के साथ ही बादल वर्षा – वृक्ष और वनस्पतियों का एक नैसर्गिक चक्र है। इसी निरन्तरता को बनाए रखन के लिए ऋषियों ने सरिताओं को दूषित करने और वृक्षों को काटने के लिए वर्जनाएं। इस प्रकार वेद मनुष्य को वायु, जल, भूमि, वनस्पतियों, अन्न आदि पर्यावरण के इन घटकों की शुद्धि के प्रति जागरूक रहने का सन्देश देता है तथा इनमें आई अशुद्धता को दूर करने के लिए प्रेरित करता है क्योंकि षुद्ध स्वच्छ पर्यावरण में ही मनुष्य शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ रह कर सुखी हो सकता है।

प्रस्तावना

भारतीय संस्कृति के इतिहास में वेदों का स्थान नितान्त गौरवपूर्ण है। 'वेदात् सर्व प्रसिद्धयति' अर्थात् वेद से ही सब विकसित हुआ है या 'वेदे सर्वं प्रतिष्ठितम्' अर्थात वेद में ही सम्पूर्ण ज्ञान प्रतिष्ठित है। यज्ञ ही वैदिक ज्ञान स्वरूप है, यज्ञ तीन प्रकार के होते हैं (1) कर्म (2) ज्ञान और (3) उपासक इन तीनों में समस्त विज्ञान भरा पड़ा है। यज्ञों में ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, आयुर्वेद, ज्योतिष, गणित, पदार्थ विज्ञान भौगोलिक ज्ञान आदि अनेकों ज्ञान विज्ञान विद्यमान है।[1]

प्रचीनकाल की सभ्यताओं में प्रकृति को सम्मान के भाव से देखा गया है। प्राकृतिक अनुराग और प्रकृति संरक्षण की चिरन्तन शाश्वत धारा है भारतीय संस्कृति। प्रकृति अनुराग हमारी पुरातन संस्कृति में इस भाँति विद्यमान है कि हम प्रकृति से भिन्न अपने अस्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकते। यह सत्य है कि हम प्रकृति के अनिवार्य और अविभाज्य अंग है कि हम प्रकृति से और प्रकृति हमसे भिन्न रह ही नहीं सकती। मानव जीवन का कोई भी पहलू ऐसा नहीं है जिसकी चर्चा वेद में न की गई हो और पर्यावरण भी इसका अपवाद नहीं है। वायु, जल, पेड़–

पौधे, भूमि, आकाश, सूर्य आदि ये सब पर्यावरण के घटक है। वेद में इन सब तत्वों का देव नाम से कथन किया गया है। भारतीय संस्कृति ने सम्पूर्ण प्रकृति को क्या, सभी प्राकृतिक शक्तियों को देवता स्वरूप माना। देव का अर्थ है 'दिव्यं गुणं समान्वितम्'। सभी तत्व अपने दिव्य गुणों के दान से पर्यावरण को शुद्ध व स्वस्थ रखते हैं।[2]

ऊर्जा के अपरिमित स्रोंत को देवता माना–सूर्य देवो भव। वस्तुतः सूर्य हमारा यानि इस ग्रह का जीवनदाता है। बिना उसके वनस्पतियों का और परोक्ष रूप से अन्य जीवों का अस्तित्व असंभव है। तभी तो वैदिक ऋषि कामना करता है कि सूर्य से कभी हमारा वियोग न हो – नः सूर्यस्य संदृशे मा युयोथाः। उपनिषदों में सूर्य को प्राण की संज्ञा दी गई। वस्तुतः सूर्य सभी प्राणियों में, वनस्पतियों में जीवन का संचार करता है।[3] वनस्पतियॉ सूर्य रश्मियों से ऊर्जा लेकर अपना आहार तैयार करती हैं और उन्हीं से अन्य पराश्रयी जीव जन्तु अपना भरण–पोषण करते हैं। सूर्य को प्रदूषण निवारक के रूप में चित्रित करते हुए यजुर्वेद में कहा गया है –

उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन व।
मां पुनीहि विश्वतः।।[4]

अर्थात् सूर्य अपने रश्मि जल से तथा स्वयं द्वारा की जाने वाली वर्षा से चारों ओर पवित्रता प्रदान करता हैं। यह एक वैज्ञानिक तथ्य भी है कि सूर्य का ताप और सूक्ष्य प्रकाश कृमियों को भी नष्ट कर देता है। उपनिषदों में वायु में दैवीय शक्ति की अवधारणा निहित है। वायु ही प्राण बनकर शरीर में वास करती है। वेदों में वायु को भेषण गुणों से युक्त माना गया है। एक श्लोक में कहा गया है – हे वायु! अपनी औषधि ले आओ और यहाँ से सब दोष दूर करो, क्योंकि तुम ही सब औशधि से युक्त हो। वायु प्राण शक्ति है, वायु के बिना हम प्राण की कल्पना ही नहीं कर सकते। वेद का कथन है कि वायु ही नहीं अपितु स्वच्छ वायु का सेवन प्राणियों लिए हितकर है – वात आ वातु भेषजं शुभ मयो धु नो हदे।

प्राण आयंशि तारिशत्।[5]

अर्थात वायु हमें ऐसी औषधि प्रदान करे जो हमारे हृदय के लिए शान्तिकर एवं आरोग्यकर हो, वायु हमारी आयु को बढ़ाए। एक अन्य मन्त्र में वैदिक ऋषि वायु के अमृत तत्व की ओर संकेत करते हुए कह रहे हैं कि हे वायु! जो तेरे घर में अमृत की निधि रखी हुई है, उसमें से कुछ अंश हमें भी प्रदान कर, जिससे कि हम दीर्घजीवी हों।[6] वायु में विद्यमान अमृत की निधि ऑक्सीजन ही है, यह प्राण वायु ही हमें प्राण देती है तथा शारीरिक मलों को विनष्ट करती है जिससे मनुष्य दीर्घजीवी होता है। उसके विपरीत प्रदूषित वायु में श्वॉस लेने से मनुष्य दुर्बल व अल्पायु होता है। शुद्ध वायु के लाभ के विषय में वेदों में कई स्थलों[7] पर वर्णन करते हुए प्राण आौर अपान दोनों प्रकार की वायुओं का निर्देश किया गया है, जिसमें प्राण वायु से शरीर में बल भेजने और अपान वायु से शारीरिक मलों के बाहर निकालने के लिए कहा गया है।

भारतीय संस्कृति में जल को भी देवता माना गया है। वैदिक ऋषि पवित्र जल की उपलब्धता की कामना करता है। अथर्ववेद में विविध प्रकार के जलों का वर्णन इस प्रकार किया

गया है –

शं ते आवो हैमवतीः शमु ते सन्तूत्स्याः।
शं ते सनिष्यदा आपः शमु ते सन्तु वर्श्याः।।
शं ते खनित्रमा आपः शं याः कुम्भे भिराभताः।।[8]

हिमालय के जल, स्रोतों के जल, सदा बहते रहने वाले जल और विभिन्न (मिट्टी, लोहा, तांबा आदि) घड़ों में रखे हुए जल, इन विविध प्रकार के जलों का वर्णन है। ऋषियों का कहना है कि ये जलअपने–अपने स्थान विशेष के लाभकारी खनिजों, औषधियों व द्रव्यों से संयुक्त होने के कारण सबके लिए प्रदूषण–शामक व रोगनाशक हों। वेद मनुष्य को चेतावनी देता है कि तू इन जल और औषधियों की हिंसा (प्रदूषित) मत कर।[9] क्योंकि शुद्ध जल के भीतर अमृत और औषध का निवास होता है।[10] ऋग्वेद में कहा गया है कि शुद्ध जलों का पान करके एवं उन्हें अपने चारों ओर बहाकर अर्थात उनमें डुबकी लगाकर हम अपना स्वास्थ्य रूप अभीष्ट प्राप्त कर सकते है, क्योंकि ये जल समस्त प्रदूषण को बहा ले जाते हैं।[11] जल ही मानव व अन्य प्राणि वर्ग एवं वनस्पति जगत् के रक्षक हो सकते हैं।[12]

भारतीय संस्कृति में वृक्षों को भी देवता स्वरूप माना गया है। वेद का कथन है कि मनुष्य वेद प्रतिपादित सौ वर्ष या सौ से भी अधिक वर्ष की आयु तभी प्राप्त कर सकता है जब वह षुद्ध वायु में श्वास ले, शुद्ध–स्वच्छ जल का पान करे, शुद्ध अन्न का भक्षण करे, शुद्ध मिट्टी में खेले–कूदे और शुद्ध भूमि में खेती करें। परन्तु न केवल हमारे देश में ही अपितु समस्त भूमण्डल पर पर्यावरण प्रदूषण इतना बढ़ गया है कि मनुष्य को जल, वायु, अन्न, भूमि, मिट्टी कुछ भी शुद्ध रूप में सुलभ नही है।[13] वृक्षों को वन्दनीय कहा गया है, आयुर्विज्ञानियों की धारणा है कि संसार में ऐसी कोई वनस्पति नहीं है, जिसका सदुपयोग न हो।

महर्षि पाराशर को भारतीय वनस्पति विज्ञान का जनक माना जा सकता है, उन्होंने वृक्षायुर्वेद में वनस्पतिशास्त्रीय महत्व, औषधीय उपयोग और निवास या उत्पत्ति स्थल की विस्तृत विवेचना की है।[14] ऋग्वेद में वनस्पतियों का वर्गीकरण वृक्ष, औषधि और वीरूध के रूप में किया गया है। वैदिक साहित्य में वनस्पतियों, उनके विविध भागों, उनके आन्तरिक और बाह्य स्वरूप से सम्बद्ध पारिभाषिक शब्दों का भण्डार है।[15] अथर्ववेद के कौशिक सूत्र में अनेक वनस्पतियों के नाम मिलते हैं यथा–पलाश, कापिल, वरण, अंगिर, अर्जुन, बेतस, शमी, दर्भ, दूर्वा, यव तिल, उशीर आदि। प्राचीन भारत में औषधियों के नामकरण पुष्प, पत्र, फल, मूल आदि के अनुसार थे। वृक्षायुर्वेद में वनस्पतियों के विषय में लिखा है –

वनस्पतिद्रुमलता गुल्माः पादपजातयः।
बीजात्काण्डात्तथा कत्दात्तज्जन्म त्रिविधं विदुः।।
ते वनस्पतयः प्रोक्ताः विना पुष्पैः फलन्ति ये।
द्रुमाश्च ते निगटिताः सहपुष्पैः फलन्ति ये।।[16]

वनस्पतियों के प्रयोग के अनुसार कुछ वर्गीकरण किए गए हैं जैसे मूलिनी–जिनका मूल (जड़) अन्य अंगों की अपेक्षा प्रायोगिक दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण है, इनकी संख्या 16 है। फलिनी

– जिनका फल प्रयोगार्थ विशेष महत्वपूर्ण है, इनकी संख्या 19 है। इसीप्रकार चरकने रोगों की चिकित्सा की दृष्टि से और मानव शरीर पर पड़ने वाले प्रभाव की दृष्टि से वनस्पतियों के 50 वर्ग बताए हैं। मानव के आहार योग्य वनस्पतियों को सात वर्गों में बांटा गया है – शूक धान्य, शिम्बी, धान्य, शाक वर्ग, फल–वर्ग, हरित वर्ग, आहार योगि वर्ग और इक्षु वर्ग।[17] पाराशर ऋषि ने सपुष्प वनस्पतियों को विविध परिवारों में बांटा है। उनका यह वर्गीकरण आधुनिक वर्गीकरण से ठीक मिलता–जुलता है।[18]

निष्कर्षतः पर्यावरण शोधन के साथ ही बादल वर्षा – वृक्ष और वनस्पतियों का एक नैसर्गिक चक्र है। इसी निरन्तरता को बनाए रखन के लिए ऋषियों ने सरिताओं को दूषित करने और वृक्षों को काटने के लिए वर्जनाएं की हमारी प्राचीन संस्कृति प्रकृति में दैवी – स्वरूप का दर्शन पाती थी, उसकी अर्चना करती थी, प्रकृति को माता की संज्ञा दी गई है। इस प्रकार वेद मनुष्य को वायु, जल, भूमि, वनस्पतियों, अन्न आदि पर्यावरण के इन घटकों की शुद्धि के प्रति जागरूक रहने का सन्देश देता है तथा इनमें आई अशुद्धता को दूर करने के लिए प्रेरित करता है क्योंकि शुद्ध स्वच्छ पर्यावरण में ही मनुष्य शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ रह कर सुखी हो सकता है।

सन्दर्भ

1. *वैदिक साहित्य और संस्कृति*, आ0 बलदेव उपाध्याय पृ0 3
2. *संस्कृत में विज्ञान* : डा0 विद्याधर शर्मा गुलेरी – पृ0 145
3. *पर्यावरण चेतना*, अखण कुमार –पृ0 87
4. यजुर्वेद – 19/43
5. ऋग्वेद – 10/186
6. ऋग्वेद– 1/186/3
7. ऋग्वेद– 10/137/2–3, अथर्ववेद – 4/1322 – 23
8. अथर्ववेद – 19/2/1–2
9. यजुर्वेद – 6/22
10. ऋग्वेद – 10/23/19
11. ऋग्वेद – 10/17/19
12. ऋग्वेद – 7/49/3
13. *संस्कृत मे ंविज्ञान* – डा0 विद्याधर शर्मा गुलेरी –पृ0 145
14. *संस्कृत मे ंविज्ञान* – डा0 विद्याधर शर्मा गुलेरी – '' पृ0 51
15. *संस्कृत मे ंविज्ञान* – डा0 विद्याधर शर्मा गुलेरी– '' पृ0 54
16. वृक्षायुर्वेद – 271 – 272
17. ''पुष्पांग सूत्र, *संस्कृत में विज्ञान* – पृ0 52
18. The cultural Heritage of India